'स्मृति की रेखाएँ' संस्मरण का तात्त्विक अनुशीलन

शिखा तिवारी

असिस्टेण्ट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
भदोही

हिन्दी गद्य की अन्य नवीन विधाओं की भाँति संस्मरण भी 20वीं शताब्दी की देन है। प्रायः प्रत्येक नयी विधा अपने ''आगमन की घोषणा पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से करती है। 'संस्मरण' के विकास में 'सरस्वती' पत्रिका का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके अतिरिक्त 'हंस', 'माधुरी', 'सुधा', 'विशाल भारत' आदि पत्रिकाओं का भी 'संस्मरण' के विकास में योगदान रहा है। 'संस्मरण' के विकास को युगानुरूप निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

1. आरम्भिक युग 2. द्विवेदी युग 3. छायावाद युग 4. छायावादोत्तर युग 5. समकालीन युग।

यद्यपि 'संस्मरण' का विधागत स्वरूप 'द्ववेदी युग' से ही मिलता है परन्तु इसके पूर्व 'भारतेन्दु युग' में 'भारतेन्दु' के कुछ 'यात्रावृत्तान्तों' में 'संस्मरण' के तत्त्व दृष्टिगत हैं।

'छायावाद युग' के संस्मरणकारों में 'महादेवी वर्मा' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके प्रमुख संस्मरण संग्रहों में – 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पथ के साथी' एवं 'मेरा परिवार' प्रमुख हैं।

'संस्मरण' एक अनुभूतिगत विधा है जिसको विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है– ''हिन्दी साहित्य कोश' में संस्मरण को इस प्रकार परिभाषित किया गया है– ''संस्मरण लेखक जो स्वयं देखता है, जिसका वह स्वयं अनुभव करता है, उसी का वर्णन करता है। उसके वर्णन में उसकी अपनी संवेदनाएँ एवं अनुभूतियाँ भी रहती हैं।''[1]

1. **'महादेवी वर्मा'–** 'अतीत के चलचित्र' में लिखती हैं– ''शैशव की स्मृतियों में एक विचित्रता है जब हमारी भाव प्रवणता गंभीर और प्रशांत होती है, तब अतीत की रेखाएँ कुहरे में से स्पष्ट होती हुयी वस्तुओं के समान अनायास ही स्पष्ट से स्पष्टतर होने लगती हैं।''[2]
2. **'डॉ0 जगदीश गुप्त'–** संस्मरण को परिभाषित करते हुए लिखते हैं– ''जो तरंगाघात मन अपना अमिट प्रभाव छोड़ जाते हैं वहीं संस्मरण बन जाते हैं।''[3]
3. **'डॉ0 नगेन्द्र'** ने 'संस्मरण' को व्याख्यायित करते हुए लिखा– ''व्यक्तिगत अनुभव से रचा गया इतिवृत्त अथवा वर्णन ही संस्मरण है।''[4]

इस प्रकार संस्मरण जीवन का 'यथार्थ' स्वरूप है, जिसमें लेखक स्मृतियों में अनुभूतिमय अभिव्यक्ति' के साथ 'तटस्थ' एवं 'प्रामाणिक' स्वरूप में व्यक्त करता है। 'अनुभूतिमय' एवं 'वैयक्तिक' अभिव्यक्ति होने पर भी संस्मरणकार उस व्यक्ति को ही महत्त्व देता है, जिसका संस्मरण लिख रहा है।

'विद्वानों' ने 'संस्मरण' की जो परिभाषाएँ दी हैं उसके आधार पर 'संस्मरण' के तत्त्वों में– 'स्मृति', 'यथार्थता', 'वैयक्तिकता', 'प्रामाणिकता', 'तटस्थता', 'संवेदना' एवं 'अनुभूति' आदि की प्रधानता है। इन तत्त्वों के आधार पर यदि 'महोदवी वर्मा' कृत – 'स्मृति की रेखाएँ' संस्मरण संग्रह का अनुशीलन करें तो इनमें से कुछ तत्त्वों को प्रत्यक्षतः स्पष्ट किया जा सकता है।

'स्मृति की रेखाएँ'– जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो जाता है– 'स्मृतियों का रेखांकन' इसमें 'स्मृति' का उल्लेख कर देने मात्र से ही 'संस्मरण' का स्पष्ट स्वरूप झलकने लगता है। 'स्मृति की रेखाएँ' संग्रह में सात (7) 'संस्मरण' संगृहीत है'– 'भक्तिन', 'चीनी फेरीवाला', 'जंग बहादुर', 'मुन्नू', 'ठकुरी बाबा', 'बिबिया', 'गुंगिया'। इन सभी 'संस्मरणों' में उपर्युक्त तत्त्वों का पूर्ण समावेश हुआ है, जिसका वर्णन निम्नवत् है– 'स्मृति', 'संस्मरण' का प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। संस्मरणकार अतीत का चित्रण मानस–पटल पर अंकित स्मृतियों के आधार पर ही करता है। 'महादेवी वर्मा' के संस्मरणों में भी इस तत्त्व का पूर्ण निर्वहन हुआ है।

'भक्तिन' नामक संस्मरण में 'स्मृति' के आधार पर ही एक सेविका का वर्णन हुआ है। जिसके पहले दिन आने से लेकर अनेक प्रकार के क्रिया–कलापों की स्मृतियों को लेखनी बद्ध किया गया है। उसकी स्मृतियों का जो शब्दांकन किया गया है, उसके सन्दर्भ में निम्नलिखित पंक्ति उल्लेखनीय है– ''छोटे कद और दुबले शरीर वाली भक्तिन अपने पतले ओठों के कोनों में दृढ़ संकल्प और छोटी आँखों में एक विचित्र समझदारी लेकर जिस दिन पहले–पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थी तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है।''[5]

'भक्ति' (लछमिन या लक्ष्मी) के अनेको हाव–भाव, क्रिया–कलापों एवं वेश–भूषा आदि को 'स्मृतियों' के माध्यम से सजीव बनाया गया है। सेवक–धर्म में उसे (भक्तिन) को 'हनुमान जी' से स्पर्द्धा करने वाली बताया गया है। उसके हाव–भाव इत्यादि से सम्बन्धित एक पंक्ति है–

''भक्तिन की वेशभूषा में गृहस्थ और वैरागी का समिश्रण देखकर मैंने शंका से प्रश्न किया– 'क्या तुम खाना बनाना जानती हो ? उत्तर में उसने ऊपर के ओंठ को सिकोड़ और नीचे के अधर को कुछ बढ़ाकर आश्वासन की मुद्रा के साथ कहा– 'ई कउन बड़ी बात आय! रोटी बनाय जानित है, दाल राँध लेइत है, साग–भाजी छउँक सकित है, अउर बाकी का रहा।''[6] सेवक रूप में भक्तिन की कर्तव्य परायणता की स्पष्ट स्मृति को प्रस्तुत किया गया है–

''पर मुझे रात की निस्तब्धता में अकेली न छोड़ने के विचार से कोने में दरी के आसन पर बैठकर बिजली की चकाचौंध से आँखे मिचमिचाती हुई भक्तिन, प्रशान्त भाव से जागरण

करती है। वह उँघती भी नहीं, क्योंकि! सिर उठाते ही उसकी धुँधली दृष्टि मेरी आँखों का अनुसरण करने लगती है। यदि मैं सिरहाने रखे रैक की ओर देखती हूँ, तो वह उठकर आवश्यक पुस्तक का रंग पूछती है, यदिमें कलम रख देती हूँ, तो वह स्याही उठा लाती है और यदि मैं कागज एक ओर सरका देती हूँ, तो वह दूसरी फाइल टटोलती है।''[7]

'चीनी फेरीवाले' की 'स्मृतियों' में उसके संघर्षों को एवं समाज के विद्रूप चेहरे को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। 'चीनी फेरेवाले' की आत्मीयता पूर्ण 'स्मृति' में भाई–बहन के पवित्र रिश्ते को भी अभिव्यक्ति मिली है। उसके 'स्मृति' को साकार रूप देती हुई निम्न पंक्तियाँ उल्लेखनीय है–

'पर आज मुखों की एक समष्टि में मुझे एक मुख्य आर्द्र नीलिमामयी आँखों के साथ स्मरण आता है।''[8]

वर्षों पहले 'चीनी फेरेवाले' से हुई प्रथम भेंट की स्मृतियों को व्यक्त करती हुई लिखती है–

''कई वर्ष पहले की बात है, मैं तांगे से उतर कर भीतर आ रही थी और भूरे कपड़े का गट्ठर बायेंक न्धे के सहारे पीठ पर लटकाये हुए और दाहिने हाथ में लोहे का गज घुमाता हुआ चीनी फेरीवाला फाटक से बाहर निकल रहा था। सम्भवतः मेरे घर को बन्द पाकर वह लौटा जा रहा था। 'कुछ – लेगा मेम साहब' – दुर्भाग्य का मारा चीनी।''[9]

'चीनी' से ज्ञात अनेक बातों को जो उसके जीवन से सम्बद्ध थी को स्पष्ट किया गया है। जिसमें कहीं उसके जीवन की 'मार्मिकता' है तो कहीं आर्थिक विषमता–

''पिता ने जब दूसरी बर्मी चीनी स्त्री को गृहिणी पद पर अभिषिक्त किया, तब उन मातृहीनों की यातना की कठोर कहानी आरम्भ हुई। दुर्भाग्य इतने से ही संतुष्ट नहीं हो सका, क्योंकि उसके पांचवे वर्ष में पैर रखते– न– रखते एक दुर्घटना में पिता ने भी प्राण खोये।''[10]

'जंग बहादुर' नामक संस्मरण में दो भाईयों, 'जंग बहादुर' एवं 'धनिया' की स्मृतियों का वर्णन है, जो कुली का काम करेते हैं। उनके साथ 'केदारनाथ' से 'बदरिकानाथपुरी' के यात्राओं की अनेक स्मृतियाँ है। जिसमें कहीं उन दोनों चचेरे भाईयों का एक–दूसरे के प्रति अगाध प्रेम का वर्णन है तो कहीं उनके जीवन की आर्थिक विषमताओं का 'यथार्थ' वर्णित है। 'जंग बहादुर' उर्फ 'जंगिया' की 'स्मृति' को निम्न पंक्तियों में स्पष्ट किया गया है जो उल्लेखनीय है– ''घनी भौहों के नीचे मुख चौड़ा और नाक कुछ गोल हुई थी.....गेहुँऑ रंग निरन्तर धूप में रहने के कारण कहीं पुराने ताँबे जैसा और कहीं झाईंदार हो गया है। बोझ बाँधने की गाँठ–गँठीली पुरानी रस्सी एक छोर गले की माला बनता हुआ कन्धे से लटक रहा था, दूसरा कमरबन्द बनकर कोट के झबरेपन में कहीं छिपा कहीं प्रकट था। ऐसा ही था वह जंग बहादुर सिंह उर्फ 'जंगिया'।''[11]

उन दोनों की अनेक स्मृतियों के साथ–साथ उनके व्यवहार में संवेदनशीलता और सहानुभूति मार्ग के अन्य कुलियों के प्रति रहती थी, उसे भी अनेक पंक्तियों में शब्दांकित किया गया है– ''मार्ग के अन्य कुलियों के प्रति भी उनके व्यवहार में संवेदनशीलता और सहानुभूति ही रहती थी, एक बार पहाड़ से उतरती हुई गाय इतने वेग से मार्ग तक फिसलती चली आई कि उसके खुर की चोट से एक कुली का पॉव घायल हो गया। घनसिंह को सामान सौंपने के उपरान्त जंग बहादुर उस लहूलुहान पैर वाले कुली को पीठ पर लादकर झरने तक ले गया..... ....इतना ही नहीं, उसे अपना और उसका बोझ भी लाना पड़ा और अंधेरे में ठिठुरते हुए, अपने फटे कपड़ों में रक्त के दाग भी साफ करने पड़े। पर प्रश्न करने वाला उससे एक ही उत्तर पा सकता था– 'कुछ तकलीस नहीं, अस्सा है।''[12]

'मुन्नू' नामक 'संस्मरण' में एक बच्चे (मुन्नू) की 'स्मृतियों' के साथ उसकी माँ के संघर्षों की 'स्मृतियाँ' भी हैं। 'मुन्नू' के माँ की स्मृतियों में 'त्याग', संघर्ष, सहनशीलता का मिश्रण है। 'मुन्नू' पाँच वर्ष का कुशाग्र बुद्धि बालक है परन्तु आर्थिक विषमताओं के कारण न तो उसका सही से पालन–पोषण हो पाता है और न शिक्षा की व्यवस्था। 'अरैल' गाँव में प्रवेश करते जिस स्त्री से 'महोदवी वर्मा' किसी घर का परिचय पूछा और उस स्त्री ने जो उत्तर दिया था उस 'स्मृति' का शब्दांकन कुछ इस प्रकार है– ''तोहका का करै का है। शहराती मेहरारून के काम–काज नाहिन बा जौन हियाँ–उहाँ गस्ता घूमै चल देती है?''[13]

'ठकुरी बाबा' – नामक संस्मरण में कल्पवास की स्मृतियों के साथ–साथ, कल्पवास करने आये 'ठकुरी बाबा' एवं उनकी मण्डली की भी स्मृति सजीव हो गई है। 'कल्पवास' के प्रथम दिन की 'स्मृति' को निम्न पंक्तियों में स्पष्ट किया गया है– ''अन्त में भक्तिन– जैसे मंत्री की सलाह और सम्मति के विरुद्ध ही सिरकी, बाँस आदि के गट्ठर समुद्रकूप की सीढ़ियों के निकट एकत्र हो गये और मल्लाह मिलकर विश्वकर्मा का काम करने लगे.....उत्तर बरामदा मेरे पढ़ने–लिखने के लिए निश्चित हुआ और दक्षिण में भक्तिन ने अपने चौके का साम्राज्य फैलाया..... धनिया आटा, दाल आदि की भौतिकता से भरी मटकियाँ और मेरे न जाने कब के पुरातन तथा सूक्ष्म ज्ञान से आपूर्ण संस्कृतग्रन्थ आदि से वह पर्णकुटी एकदम बस गई।''[14]

'कल्पवास' में 'ठकुरी बाबा' एवं उनके साथ के लोग जब पहले दिन 'महादेवी वर्मा' के कुटिया में प्रवेश किये, उस स्मृति को स्पष्ट करने के लिए कुछ पंक्तियाँ उल्लेखनीय है– ''उठकर देखा– एक वृद्ध के नेतृत्व में बालक, प्रौढ़, स्त्री, पुरुष आदि की सम्मिलित भीड़ थी। गठरी–मोटरी, बरतन, हुक्का, चिलम, पिटारा, लोटा–डोर सब गृहस्थी लादे–भाँदें, वह अनियन्त्रित अभ्यागत मेरे बरामदे में कैसे आ घुसे, यह समझना कठिन है।''[15]

बूढ़े बाबा 'ठकुरी' की आत्मीयता पूर्ण स्मृति को स्पष्ट करती हुई निम्न पंक्ति द्रष्टव्य है– ''अरूचि के कारण घी रहित और पथ्य के कारण मिर्च–अचार के बिना ही में खिचड़ी खाती हूँ, यह अनेक बार कहने पर भी वृद्ध ने माना नहीं और मेरी खिचड़ी पर दानेदार घी और थाली में एक ओर अचार रख दिया। दही का दोना थाली में टिकाकर अनुनय के स्वर में कहा– तनिक सा चीखौ तो बिटिया रानी ! का पढ़े–लिखे मनई इहैं खाय कै जियत हैं।''[16]

संस्मरण जीवन का 'यथार्थ' स्वरूप है, जिसमें लेखक स्मृतियों में अनुभूतिमय अभिव्यक्ति' के साथ 'तटस्थ' एवं 'प्रामाणिक' स्वरूप में व्यक्त करता है।'अनुभूतिमय' एव 'वैयक्तिक' अभिव्यक्ति होने पर भी संस्मरणकार उस व्यक्ति को ही महत्त्व देता है, जिसका स ंस्मरण लिख रहा है। 'विद्वानों' ने 'संस्मरण' की जो परिभाषाएँ दी हैं उसके आधार पर 'संस्मरण' के तत्त्वों में– 'स्मृति', 'यथार्थता', 'वैयक्तिकता', 'प्रामाणिकता', 'तटस्थता', 'संवेदना' एव 'अनुभूति' आदि की प्रधानता है।

इसी प्रकार 'महादेवी वर्मा' ने 'कल्पवास' के प्रत्येक क्षण की स्मृतियों को लिपिबद्ध किया है। 'ठकुरी बाबा' के परिवार से सम्बन्धित स्मृतियों को भी सजीव किया गया है। जिसमें एक स्त्री के विषमताओं से लेकर उसके संघर्ष तक का वर्णन समाहित है।

'बिबिया' नामक संस्मरण में एक स्त्री के प्रति समाज के विद्रूप एवं दकियानूसी सोच को दृष्टिगत कराया गया है। 'बिबिया' की स्मृतियों में उसके जीवन की विषमताओं, विद्रूपताओं के साथ–साथ उसके संघर्षशील जीवन के कारूणिक अन्त का वर्णन है। 'बिबिया' की स्मृति 'महादेवी वर्मा' को बरेठा (धोबी) 'मदड़ी' एवं उसकी माँ को देखकर होता है– ''कभी–कभी दृश्य, चित्र या व्यक्ति को देखकर हमें उसका विरोधी दृश्य, चित्र या व्यक्ति स्मरण हो आता है। मुझे भी इन हंसोड़, प्रसन्न और बात–बात पर, उलझने वाले माँ–बेटों को देखकर बिबिया और उसकी माई याद आ जाती हैं।''[17]

'बिबिया' की 'स्मृति' में उसके सम्पूर्ण जीवन की स्मृतियों को समेट लिया गया है। वह बाल–विधवा थी एवं उसके भाई 'कन्हई' ने उसका विवाह 'रमई' नाम के घोबी से किया परन्तु उसमें अपमानित होकर वह ससुराल छोड़कर मायके आ गयी–

''कुछ महीने बाद अचानक एक दिन मैले–कुचैले कपड़े पहने हुए बिबिया आ खड़ी हुई। उसके मुख पर झाँई आ गई थी और शरीर दुर्बल जान पड़ता था, पर न आँखों में विषाद के आँसू थे, न ओठों पर मुख की हँसी। न उसकी भाव–भंगिमा में अपराध की स्वीकृति थी और न निरपराधी की न्याय–याचना। एक निर्विकार उपेक्षा ही उसके अंग–अंग से प्रकट हो रही थी।''[18]

पुनः उसका विवाह 'झनकू' नामक विधुर अधेड़ से कर दिया गया। बिबिया' के अत्यन्त सहनशीलता पूर्वक संघर्ष करते हुए भी समाज से तिरस्कार एवं अपमान ही मिला। समाज के इस विद्रूप चेहरे को सहन करने में असमर्थ, संघर्षशील बिबिया' ने अपने जीवन का अन्त कर लिया।

'गुंगिया' के संस्मरण में एक मातृत्व स्नेह को सजीव स्वरूप प्रदान किया गया है। बोलने में असमर्थ 'गुगिया' ने अपने सम्पूर्ण जीवन के अभावों , अन्यायों को भुलाकर अपने बहन के पुत्र–हुलासी' का पालन–पोषण करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। इसके लिए भले ही उसे कितने कष्ट उठाने पड़े हो या कठिन परिश्रम करना पड़ा हो। अपने पुत्र– 'हुलासी' के खो जाने पर 'गुंगिया' (धनपतिया)ने युवा वियोग में 'प्राण त्याग दिये। इस 'संस्मरण' में लेखिका स्वयं के द्वारा लिखी गयी है पत्र–पत्रिकाओं की स्मृतियों को भी लिपिबद्ध किया है। कभी पीपल के नीचे, कभी पत्तों के ढेर पर और कभी किसी का आँग नही पत्र लेखन का स्थान बन गया था। इसी पत्र–लेखन से जुड़ी 'गुंगिया' की स्मृति भी सजीव हो उठती है– ''यह सब तो जैसे–तैसे चल ही रहा था; पर एक दिन जग गुंगिया मेरे आँचल का छोर थामकर विधि हाव–भाव द्वारा पत्र लिख देने का संकेत करने लगी, तब तो मैं स्वयं आवाक् रह गई है।''[19]

'संस्मरण' में वर्णित घटनाएँ 'यथार्थ' एवं वास्तविक होती है, क्योंकि वे स्वयं संस्मरणकार के द्वारा देखी एवं अनुभव की होती है।

'भक्तिन' की स्मृति में 'भक्तिन' के जीवन के संघर्षों के तमाम यथार्थ पहलू वर्णित है। कहीं न कहीं उसके जीवन की यथार्थता– 'स्त्री–विमर्श' के एक पक्ष को प्रकाश में लाता है। भक्तिन जब पुत्रियों की माँ बनती हैं तो उसकी जो उपेक्षाएँ हुई, तिरस्कार मिले उसका यथार्थ उल्लेख निम्न पंक्ति में द्रष्टव्य है–

''जब उसने गेहुएँ रंग और बटिया जैसे मुख वाली पहली कन्या के दो संस्करण और कर डाले तब सास और जिठानियों ने ओंठ बिचकाकर उपेक्षा प्रकट की।''[20]

पुत्रियों के जन्म के पश्चात् उसे जो दुर्व्यवहार परिवार से मिला उसका उल्लेख इस प्रकार है–

''जिठानियाँ बैठकर लोकचर्चा करती और उनके कलूटे लड़के धूल उड़ाते, वह मट्ठा फेरती, कूटती, पीसती, राँधती और उसकी नन्हीं लड़कियाँ गोबर उठाती, कण्डे पाथती। जिठानियाँ अपने भात पर सफेद राब रखकर गाढ़ा दूध डालती और अपने लड़कों को औटते हुए दूध पर से मलाई उतार कर खिलाती। वह काले गुड़ की डली के साथ कठौती में मट्ठा पाती और लड़कियाँ चने, बाजरे की घुघरी चबाती।''[21]

29 वर्ष की अवस्था में विधवा हो जाने पर भक्तिन समस्त विषमताओं का संघर्ष एवं दृढ़ता से सामना करते हुए ओजस्वी वाणी में इसका जवाब दिया–

''हम कुकरी–बिलारी न होयँ, हमार मन पुसाई तौ हम दूसरा के जाब नाहिं त तुम्हार पचै के छाती पै होरहा भूँजब और राज करब, समुझे रहौ।''[22]

जब भक्तिन की अनुपस्थिति में तीतर–बाज लड़का जो भक्तिन की विधवा लड़की से विवाह करने के लिए भक्तिन के जिठौतों द्वारा बुलाया गया है। उसका, उस लड़की ने किस

प्रकार साहस के साथ सामना की यह स्पष्ट करने के लिए एक पंक्ति उल्लेखनीय है– ''एक दिन माँ की अनुपस्थिति में वर महाशय ने बेटी के कोठरी में घुसकर भीतर से द्वार बन्द कर लिया और उसके समर्थक गाँव वालों को बुलाने लगे। अहीर युवती ने जब इस डकैत वर की मरम्मत कर कुण्डी खोली तब पंच बेचोर समस्या में पड़ गये।''[23]

इसमें एक तरफ उस युवक के चरित्र में समाज की विद्रूपता नजर आती है, तो दूसरी तरफ उस लड़की का संघर्ष एवं साहस भी सामने आता है। इस प्रकार भक्तिन के जीवन की यथार्थ स्मृति को एवं उसके भाव की यथार्थता को प्रस्तुत किया गया है।

'चीनी फेरीवाले' की स्मृति में उसके जीवन की विषमताओं के साथ–साथ समाज के निकृष्ट चेहरे की यथार्थता भी सिद्ध होती है। 'चीनी फेरीवाले' की सौतेली माँ की क्रूरताओं एवं अत्याचारों से आहत उसके बहन की यथार्थता भी वर्णित है। बाल्यावस्था की यथार्थ स्मृति को निम्न पंक्तियों में स्पष्ट किया जा सकता है–

''कितनी ही बार सबेरे, आँख मूँदकर बन्द द्वार के बाहर दीवार से टिकी हुई बहिन की ओर से गीले बालों में, अपनी ठिठुरी उँगलियों को गर्म करने का व्यर्थ प्रयास करते हुए, उसने पिता के पास जाने का रास्ता पूछा था। उत्तर में बहिन के फीके गाल पर चुपचाप ढुलक आने वाले आँसू की बड़ी बूँद देखकर वह घबराकर बोल उठा था– उसे कहवा नहीं चाहिए, वह तो पिता को देखन भर चाहत है।''[24] उन दोनों भाई–बहनों के जीवन की विषमताओं की यथार्थता को व्यक्त करने वाली एक पंक्ति उल्लेख्य है– ''कई बार पड़ोसियों के यहाँ रकाबियाँ धोकर और काम के बदले भात माँगकर बहिन ने भाई को खिलाया था।''[25]

विमाता के क्रूरताओं की यथार्थता का उल्लेख किया गया है जिसमें उसकी बहन के ऊपर हो रहे अत्याचारों का संवेदनात्मक वर्णन है– ''विशाल शरीर वाली विमाता का जंगली बिल्ली की तरह हलके पैरों से बिछौने से उछलकर उतर आना, बहिन के शिथिल हाथों से बटुए का दिन जाना और उसका भाई के मस्तक पर मुख रखकर स्तब्ध भाव से पड़े रहना आदि क्रम ज्यों के त्यों चलते रहे।''[26] जब फेरीवाला गिरहकटों के हाथ लगा था उस समय की मार्मिकत यथार्थता स्पष्ट है– ''कुत्ते के पिल्ले के समान ही वह घुटनों के बल खड़ा रहता और और हँसने –रोने की विविध मुद्राओं का अभ्यास करता।.....पर क्रन्दन उसके भीतर इतना अधिक उमड़ा रहता था कि जरा मुँह बनाते ही दोनों आँखों से दो गोल–मोल बूँद निकल आती.....इसे अपनी दुर्लभ शिक्षा का फल समझकर उसका शिक्षक प्रसन्नता से उछलकरर उसे एक लात, जमाकर पुरस्कार देता।''[27]

इन सब यथार्थताओं के साथ उसके देश–प्रेम की भावना की यथार्थता तब सिद्ध हुई जब उसे 'चीन' से बुलावा आया और लेखिका द्वारा यह कहा गया– ''तुम्हारे तो कोई है ही

नहीं, फिर बुलावा किसने भेजा।''[28] इस पर उसने जो प्रतिउत्तर दिया उससे, उसके देश प्रेम की यथार्थता का बोध हुआ–

''हम कब बोला हमारा चाइना नहीं है ? हम कब ऐसा बोला सिस्तर ?''[29]

'जंग बहादुर' के 'संस्मरण' में उसके कुली जीवन की सम्पूर्ण कहानी को यथार्थ रूप में वर्णित किया गया है। साथ ही यात्रा के समय उनके अनेक संघर्षों को यथार्थता व्यक्त किया गया है। 'जंग बहादुर' उर्फ जंगिया एवं उसके चचेरे भाई 'धनिया' के अगाध प्रेम को 'भरत' का स्मरण हो जाना स्वाभाविक ही है। कुलियों के जीवन की यथार्थता व्यक्त करने के लिए संस्मरण की कुछ पंक्तियाँ उल्लेखनीय है–

''चट्टी–चट्टी पर इनमें से दो–एक बीमार पड़ते हैं और कहीं–कहीं मरर भी जाते हैं। अन्त्येष्टि का काम यात्रियों से माँग–जाँचकर सम्पन्न किया जाता है। साधन न मिलने पर गहरा खड्ड तो स्वाभाविक समाधि है।''[30]

'मुन्नू' से जुड़ी हुई स्मृतियों में 'अरैल' गाँव की विषमताओं के साथ 'मुन्नू' के परिवार का भी यथार्थ वर्णित है। जहाँ उसके परिवार में पिता, निकम्मा, कामचोर है, वहीं माता का जीवन, जिम्मेदारियों से पूर्ण एवं संघर्षशील हैं मुन्नू कुशाग्र बुद्धि का दुबला–पतला बालक है, जिसका जीवन विषमताओं से भरा हुआ है। 'मुन्नू' की माँ के संघर्षमय जीवन की यथार्थता को व्यक्त करने में निम्नलिखित पंक्तियाँ सहायक है– ''उसकी स्थिति में रोज कुँआ खोदना रोज पानी पीना' ही प्रधान है, इसी से उसकी गृहस्थी का रूप बनजारों की चलती–फिरती गृहस्थी के समान हो गया है; पर अपनी अनिश्चित आजीविका को वह अपनी कुशलता से कष्टकर नहीं बनने देती।''[31]

'ठुकरी बाबा' के संस्मरण में जहाँ ठुकरी के सम्पूर्ण जीवन के उतार–चढ़ाव की यथार्थता है, वहीं दूसी तरफ 'कल्पवास' के अनुभव की भी यथार्थता वर्णित है। उनके जीवन में एक पुत्री, अन्धा जमाई था। अनेक विषम परिस्थितियों में संघर्ष करने के बाद भी उनके जीवन का सबसे बड़ा सत्य यही था कि वे एक सहृदयी व्यक्ति थे– ''ठुकरी बाबा अपने समाज के प्रतिनिधि हैं, इसी से उनकी सहृदयता वैयक्तिक विचित्रता न होकर ग्रामीण जीवन में व्याप्त सहृदयता को व्यक्त करती है।''[32]

'बिबिया' की स्मृति में एक स्त्री के ऊपर हो रहे अत्याचारों का कटु सत्य वर्णित है, जिसमें स्त्री कितना भी संघर्ष कर ले परन्तु समाज के सफेदपोशी, क्रूर, अत्याचारी जनों से उसका बच निकलना मुश्किल होता है। 'बिबिया' के स्मृतियों का भी यही यथार्थ है, उसका कोई दोष न होने पर भी सजा मिलती है और दोषी समाज में स्वतन्त्र घूमता है। 'बिबिया' के साथ हुए अत्याचारों का यथार्थ इस प्रकार व्यक्त है–

''बिबिया के शरीर पर घूँसों के भारीपन के स्मारक गुम्मड़ उभर आये थे,.....उस पर द्वार बन्द हो जाना उसके लिए क्षमा की परिधि से निर्वासित हो जाना था। वह अन्धकार में अदृष्ट रेखा जैसी पगडंडी पर गिरती–फिरती, रोती–कराहती अपने नैहर की ओर चल पड़ी।''[33]

'गुंगियाँ' की स्मृति में माह वत्सलता का यथार्थ है। गूँगेपन के कारण पति द्वारा त्याग दिये जाने पर भी वह उसी के पुत्र 'हुलासी' के पालन–पोषण में अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर देती है। ससुराल से गूँगेपन को अभिशाप समझकर उसको त्याग दिया गया– ''बहू गूँगी है, उसके बाप ने सबको ठग लिया, इससे गहने छीनकर निकाल दो, आदि उद्‌गारों में गुँगिया ने अपने जीवन के निठुर अभिशाप की वह छाया देखी जो नैहर में माँ–बाप की ममता से ढकी हुई थी।''[34] 'वैयक्तिकता' संस्मरण का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है क्योंकि सम्पूर्ण स्मृतियां संस्मरणकार की स्वयं की ही होती है। 'भक्तिन', 'चीनी फेरीवाला', 'जंग बहादुर', 'मुन्नू', 'ठकुरी बाबा', 'बिबिया', 'गुगियाँ' आदि की स्मृतियाँ कहीं–न–कहीं 'महादेवी वर्मा' के स्वयं के व्यक्तित्व से भी सम्बन्ध रखते हुए आत्मीय हो उठते हैं।

'भक्तिन' की स्मृति में अनेक स्थलों पर अपनी स्वयं ककी बातों, आदतों इत्यादि का तटस्थ वर्णन किया गया है–

'पर जब उसके उत्साह पर तुषारापात करते हुए मैंने रूँआसे भाव से कहा– 'यह बनाया है' तब वह हतबुद्धि हो रही। रोटियाँ अच्छी संकने के प्रयास में कुछ अधिक खरी हो गयी हैं;..... ..... भक्तिन के इस सारगर्भित लेक्चर का प्रभाव यह हुआ कि मैं, मीठे से विरक्ति के कारण बिना गुड़ के और घी से अरुचि के कारण, रूखी दाल से एक मोटी रोटी खाकर बहुत ठाठ से यूनिवर्सिटी पहुँची और न्याय–सूत्र पढ़ते–पढ़ते शहर और देहात के जीवन के इस अन्तर पर विचार करती रही।''[35]

इसी प्रकार प्रत्येक स्मृतियों ने वैक्तिकता की प्रधानता है। 'चीनी फेरीवाले' संस्मरण की एक पंक्ति द्रष्टव्य है– ''मैंने उसे कुछ बोलने का अवसर न देकर व्यस्त भाव से कहा– 'अब तो मैं कुछ न लूँगी ! समझे ?''[36]

'जंग बहादुर' संस्मरण मैं 'वैयक्तिकता' की स्पष्टता निम्न पंक्तियों में होती है– ''उनके बेटे जिन तीर्थों में उन्हें नहीं ले जा सकते, वहीं मैं ले जा रही हूँ, अत' मैं सब बेटों में सबसे बड़ी हूँ और मेरी बुद्धि सब प्रकार विश्सनीय है, इस सम्बन्ध में उन्हें कोई संदेह नहीं था।''[37]

संस्मरणकार का स्मर्यमाण के प्रति अनुभूति एवं संवेदना होना स्वाभाविक है क्योंकि इसके बिना स्मृति को इतना सजीव स्वरूप नहीं प्रदान किया जा सकता है।

'भक्तिन' सेविका है परन्तु उसके प्रति जो अनुभूतियाँ एवं संवेदनाए दिखती हैं वह 'भक्तिन' को 'सेविका' से कहीं ऊपर ले जाकर 'संरक्षिका' की कोटि में खड़ा कर देता है– ''भक्तिन और मेरे बीच में सेवक– स्वामी का सम्बन्ध है यह कहना कठिन है, क्योंकि ऐसा कोई

स्वामी नहीं हो सकता जो इच्छा होने पर भी सेवक को अपनी सेवा में हटा न सके और ऐसा कोई सेवक भी नहीं सुना गया, जो स्वामी से चले जाने का आदेश पाकर अवज्ञा से हंस दे। भक्तिन को नौकर कहना उतना ही असंगत है जितना अपने घर में बारी–बारी से आने–जाने वाले अंधेरे–उजाले और आँगन में फूलने वाले गुलाब और आम को सेवक मानना। वे जिस प्रकार अस्तित्व रखते हैं.....उसी प्रकार भक्तिन का स्वतन्त्र व्यक्तित्व अपने विकास के परिचय के लिए ही मेरे जीवन को घेरे हुए है।''[38]

'भक्तिन' के प्रति जो अनुभूतिगत–आत्मीयता प्राप्त होती है, उसके वर्णन के लिए निम्न पंक्तियाँ उल्लेखनीय है– ''मेरे भ्रमण की एकान्त साथिन भक्तिन ही रही है.....किसी भी परिस्थिति में, किसी भी समय, कहीं भी जाने के लिए प्रस्तुत होते ही मैं भक्तिन को छाया के समान साथ पाती हूँ।''[39]

'महादेवी वर्मा' का 'भक्तिन' के प्रति एवं 'भक्तिन' का 'महोदवी वर्मा' के प्रति जो संवेदनाएं एवं अनुभूतियाँ थी उनका स्पष्टीकरण एक पंक्तियों में हो जाती है– ''भक्तिन की कहानी अधूरी है; पर उसे खोकर मैं इसे पूरा नहीं करना चाहती।''[40]

'चीनी फेरीवाले' के प्रति अनुभूतियाँ एवं संवेदनाएँ ही है जो लेखिका को सिल्क खरीदने के लिए विवश कर देता है। 'चीनीफेरीवाले' की अनुभूतियों ने 'महादेवी वर्मा' को 'बहन' के रूप में स्वीकारा है। अनुभूतिगत – संवेदना को व्यक्त करती हुई निम्न पंक्ति उल्लेखनीय है– ''और आज कई वर्ष हो चुके हैं.....चीनी को फिर देखने की सम्भावना नहीं, उसकी बहिन से मेरा कोई परिचय नहीं, पर न जाने क्यों वे दोनों भाई–बहिन में स्मृति पट से हटते नहीं।''[41]

'जंग बहादुर' की स्मृतियों में अनुभूतियों एवं संवेदना का अनूठा मिश्रण है। जो 'महादेवी वर्मा' के ममत्त्व को जागृत करता है। जंग बहादुर एवं धनिया की अनुभूति एवं संवेदनाएँ ही हैं जो महादेवी वर्मा में माँ का स्वरूप देखते हैं और उनके विदा के समय आँसू के रूप में सामने आते हैं। इस सन्दर्भ में एक पंक्ति उल्लेखनीय है– ''जीवन में बहुत छोटी अवस्था से ही मैं माँ का सम्बोधन और उसके उपयुक्त ममता का उपहार पाती रही हूँ; परन्तु इन पर्वत–पुत्रों के माँ सम्बोधन में जो कोमल स्पर्श और ममता की सहजस्वीकृति रहती थी, वह अन्यत्र दुर्लभ रही है।[42]

'मुन्नू' की स्मृतियों में एक बालक के प्रति अनुभूति एवं संवेदनाएँ स्पष्ट हैं, वहीं मुन्नू की माँ के प्रति इतना अधिक ममत्त्व है कि वह 'महादेवी वर्मा' के घर को अपना एक–मात्र नैहर स्वीकारती है– ''तब से मुन्नू की माई 'हम तौ आज नैहरे जाब' कहकर प्रायः यहाँ चली आती है। मेरा घर उसका एक मात्र नैहर है। यह सोचकर मन व्यथित होने लगता है।''[43]

वृद्ध, 'ठकुरी बाबा' के संस्मरण में ठकुरीबाबा के प्रथम परिचय से ही अनुभूतियाँ ही द्रष्टव्य हैं। अनुभूतिगत संवेदना के साथ ही 'महादेवी वर्मा' उन्हें एवं उनके साथियों को अपने

तम्बू में शरण देती है और धीरे–धीरे वे सब उनके साथ एक परिवार के रूप में दृष्टिगत होते हैं। 'महादेवी वर्मा' को भी उन लोगों से जो स्नेह प्राप्त हुआ उसमें 'अनुभूतियां एवं 'आत्मीयता' स्पष्ट है– ''वृद्ध के कण्ठस्वर और उसके कथन की आत्मीयता ने मुझे बलात् आकर्षित कर लिया। भक्तिन की दृष्टि में अस्वीकार के अक्षर पढ़कर मैंने उसे अनदेखा करते हुए कहा– ''आप यही ठहरे बाबा । मेरे लिए तो यह कोठरी ही काफी है।.....इतना बड़ा बरामदा है, आप सब आ जायेंगे। रैन–बसेरा तो है ही।''[44]

'बिबिया' की स्मृतियों में अनुभूतियाँ एवं संवेदनाएँ ही हैं जो उसके जीवन के यथार्थ को निष्पक्ष प्रस्तुत करता है।

'गुगिया' के प्रति संवेदनात्मक, यथार्थता ने ही 'महोदवी वर्मा' को उसके पुत्र (हुलासी) को ढूँढने के लिए प्रेरित करता है। जिससे वे अपनी सहपाठिनी को पत्र के माध्यम से– गुगियाँ की स्थितियों से अवगत कराके 'हुलासी' को ढूँढने के लिए कहती है। 'गुगियाँ' का अपमानित होकर भी 'हुलासी' को स्वीकारना, पूर्ण ममत्त्व से उसका पालन–पोषण करना और उसके (हुलासी) के वियोग में प्राण त्याग देने आदि में संवेदनात्मक अनुभूतियों को प्रत्यक्षता स्पष्ट किया जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचनाओं से नितान्त स्पष्ट हो जाता है कि 'स्मृति की रेखाएँ' संग्रह में '–संस्मरण' के उपर्युक्त तत्त्वों का पूर्ण निर्वहन हुआ है। जो पाठक के हृदय पर अपना अमिट प्रभाव अंकित करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, तृतीय संस्करण, पृ0 सं0 714
2. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र–रामा लोकभारती प्रकाशन, पृ0 सं0 11
3. जगदीश गुप्त, सारिका–संस्मरण विशेषांक, चित्र ये बनाने में चित्रकार थाने में', पृ0सं0 37
4. जयकिशन खण्डेलवाल, हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ0 सं0 785
5. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती, पृ0 सं0 9
6. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती, पृ0 सं0 13
7. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती, पृ0 सं0 16–17
8. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती, पृ0 सं0 20
9. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती, पृ0 सं0 20–21
10. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती, पृ0 सं0 23
11. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'जंग बहादुर', लोक भारती, पृ0 सं0 31
12. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'जंग बहादुर', लोक भारती, पृ0 सं0 37–38
13. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'मुन्नू' लोक भारती, पृ0 सं0 41

14. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'ठकुरी बाबा', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 58–59
15. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'ठकुरी बाबा', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 61
16. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'ठकुरी बाबा', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 66
17. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाए– बिबिया, लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 84
18. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाए– बिबिया, लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 86
19. महोदवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 106
20. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 10
21. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 10–11
22. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 11
23. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 12
24. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 23
25. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 23
26. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 24
27. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 25
28. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 27
29. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 27
30. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'जंग बहादुर', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 33
31. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'मुन्नू', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 46
32. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'ठकुरी बाबा', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 79
33. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'बिबिया', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 94
34. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'गुगियाँ', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 18
35. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 13–14
36. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 21
37. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'जंग बाहादुर', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 32
38. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 18
39. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 17
40. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'भक्तिन', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 19
41. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'चीनी फेरीवाला', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 27
42. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'जंग बाहादुर', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 35
43. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'मुन्नू', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 53
44. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ– 'ठकुरी बाबा', लोक भारती प्रकाशन, पृ0 सं0 61